बौद्ध धर्म के चार आर्य सत्य की अवधारणा

'चार आर्य सत्य' (four Noble Truth) गौतम बुद्ध के व्यावहारिक दर्शन को प्रकट करने वाला विचार है। इन चार आर्य सत्यों में दुःख क्या है एवं दुःख से किस प्रकार बचा जा सकता है, इन व्यावहारिक प्रश्नों पर प्रमुखता से विचार किया गया है। चार आर्य सत्यों के ज्ञान एवं तदनुसार आचरण से न केवल इस जीवन के दुःख दूर होते हैं वरन् इससे दुःख की जड़, आवागमन का चक्र (जन्म-मरण की श्रृंखला) ही रुक जाता है और अधिक निर्वाण की प्राप्ति करता है।

'आर्य' का अर्थ है – श्रेष्ठ अथवा 'अलौकिक'। चूँकि बुद्ध द्वारा प्रतिपादित ये सत्य श्रेष्ठ अथवा दूसरे शब्दों में अलौकिक है, इसलिए इन्हें 'आर्य-सत्य' कहा गया है।

बौद्ध दर्शन के अन्तर्गत चार आर्य सत्यों में सभी बुद्धोपदिष्ट उपदेश निहित हैं। ये आर्य सत्य हैं –

(1). दुःख है (There is Suffering);
(2). दुःख का कारण है (There is Cause of Suffering);
(3). दुःख का नाश संभव है (There is Cessation of Suffering), और
(4). दुःख निरोध का मार्ग है (There is a way of Cessation of Suffering).

(1). प्रथम आर्यसत्य (दुःख है):–

प्रथम आर्यसत्य में दुःख की उपस्थिति का वर्णन हुआ है। 'दुःख है', अर्थात् दुःख का अस्तित्व स्वयंसिद्ध है इसकी सत्यता में कोई भी व्यक्ति संदेह नहीं करता है। इस सत्य के अनुसार विश्व दुःखमय है। दुःख का अर्थ है- जो कष्टपूर्वक सहन हो (दु = कष्टसाध्य, ख) = सहना)। बौद्ध ग्रंथ 'महावग्ग' के 'धम्मचक्कपवत्तनसुत्त' में बताया गया है कि - "जन्म लेना दुःख है, बुढ़ापा दुःख है, मरण दुःख है, शोक करना दुःख है, विलाप करना (रोना-चीखना) दुःख है, चीड़ा होना दुःख है, चिंतित होना दुःख है, व्याग्र (परेशान) होना दुःख है, इच्छा की पूर्ति न होना दुःख है, प्रिय से वियोग दुःख है, अप्रिय से संयोग दुःख है। संक्षेप में यह पंचउपादान या मानव जीवन ही दुःख है।"

अतः स्पष्ट है कि संसार में विद्यमान सारे पदार्थ दुःखमय हैं, दुःखस्वरूप हैं। 'संयुक्त निकाय' के 'सगाथवग्ग' में दुःख का विशद वर्णन किया गया है कि - दुःख ही का भाव तथा दुःख का ही अभाव होता है। यथा -

दुक्खमेव हि सम्भोति, दुक्खं तिट्ठति वेति च।
नाञ्ञत्र दुक्खा सम्भोति, नाञ्ञत्र दुक्खा निरुज्झति॥

विशुद्धिमग्ग में कुल सात प्रकार के दुःख बताये गये हैं -
① दुःखदुःख ② विपरिणाम दुःख ③ संस्कार दुःख ④ प्रतिच्छन्न-दुःख ⑤ अप्रतिच्छन्न दुःख ⑥ पर्याय दुःख ⑦ निष्पर्यायदुःख।

इस प्रकार से ये सभी दुःख पीड़न, बाधन, संताप आदि अर्थों में प्राणीमात्र में व्याप्त होकर प्रतिकूल, अप्रिय, अपनाप आदि का अनुभव ही दुःख-सत्य है। इसके कारण ही मानव अशान्त और उद्विग्न रहता है। इन तथ्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि संसार एवं जीवन का प्रत्येक क्षण दुःखमय है।

(2) द्वितीय आर्यसत्य (दुःख-समुदाय) :→

दुःख समुदाय अर्थात् दुःख की उत्पत्ति का कारण। दुःख की उत्पत्ति सकारण है, अकारण नहीं। 'समुदाय' का अर्थ यहाँ पर 'कारण' से है। बिना किसी कारण के कार्य उत्पन्न नहीं होता। प्रत्येक कार्य का कोई-न-कोई कारण अवश्य होता है तथा प्रत्येक कारण का कार्य। इसी कार्य-कारण नियम से सारा संसार बंधा हुआ है। अतः यदि दुःख है तो इसका कारण भी अवश्य है।

दुःख का (हेतु) कारण है - 'तृष्णा'। यह तृष्णा ही संपूर्ण दुःखों का मूल है, जिसके फलस्वरूप मानव को नाना प्रकार के दुःखों को सहन करना पड़ता है। यह तृष्णा ही पुनर्जन्म एवं लोभ, मोह का कारण है। तथागत ने कहा है कि -

"हे भिक्षुगण! दुःख का वास्तव हेतु तृष्णा है जो बारम्बार प्राणियों को उत्पन्न करती है (पौनर्भविका), विषयों के राग से

युक्त है तथा उन विषयों का अभिनन्दन करने वाली है। यहाँ और वहाँ सर्वत्र अपनी तृप्ति खोजती रहती है।" यह तृष्णा तीन प्रकार की है —

(1) कामतृष्णा — इन्द्रिय सुख की इच्छा।
(2) भव तृष्णा — जीवित रहने की इच्छा।
(3) विभव तृष्णा — वैभव प्राप्त करने की तृष्णा या इच्छा।

यद्यपि बौद्ध दर्शन में केवल तृष्णा ही दुःख समुदय का कारण नहीं है इसके अतिरिक्त भी दुःख के कारणों के मूल-भूत रूप में 'द्वादश-निदान' (कार्य-कारण सिद्धान्त) के रूप में कार्य-कारण का एक बारह (12) कड़ियों वाली शृंखला पर प्रकाश डाला है, जिसके मूल में अविद्या है जो तीनों कालों से सम्बद्ध है तथा हमारे अस्तित्व का कारण है। वे हैं —

अविद्या, संस्कार, विज्ञान, नाम-रूप, षडायतन, स्पर्श, वेदना, तृष्णा, उपादान, भव, जाति और जरा-मरण। इन्हें प्रतीत्य-समुत्पाद या द्वादश निदान भी कहा जाता है। इस प्रकार से तथागत ने कहा है कि — "जो मनुष्य संसार में अपने जीवन काल में इस कारण-समुदाय और दुस्त्याज्य तृष्णा को जीत लेता है, उसके शोक (दुःख) उसी प्रकार गिर जाते हैं; जैसे कि कमल के ऊपर से जल बिंदु"। यथा —

यो चेतं सहती जम्मिं तण्हं लोके दुरच्चयं।
सोका तम्हा पपतन्ति 'उदबिन्दू' व पोक्खरा॥ (धम्मपद)

(3) तृतीय आर्यसत्य (दुःख निरोध):→ इस तीसरे आर्य सत्य में बुद्ध हमें आश्वस्त करते हैं कि दुःख का निरोध संभव है, अर्थात् दुःखों का अन्त हो सकता है। वस्तुतः यही तथागत के संपूर्ण चिंतन-मनन का उद्देश्य था। वे स्वयं कहते हैं कि, — "जिस प्रकार समुद्र के पानी में केवल लवण का स्वाद रहता है, उसी तरह मेरे दर्शन में केवल मुक्ति अर्थात् दुःखहीन अवस्था का स्वाद है।" अतः 'दुःख का नाश संभव है' यह भी एक आर्य सत्य है।

बौद्ध-दर्शन के अनुसार जो कारण दुःख की उत्पत्ति में हेतु बनते हैं, यदि उस कारण परम्परा का नाश कर दिया जाय तो अपने आप चलने वाली मशीन की तरह कार्यों का नाश भी स्वतः हो जायेगा।

'निरोध' से यहाँ तात्पर्य है - नाश या त्याग। जब दुःख है और दुःख का कारण है तो इस कारण का निरोध (निर्वाण) से यह अंत संभव है। तृष्णा का अशेष निरोध, त्याग, प्रतिनिःसर्ग, मुक्ति तथा अनाशक्ति ही दुःख-निरोध है। इसे ही हम 'निर्वाण' की अवस्था कहते हैं। इस दुःख-हीन, परम शांत मुक्ति की अवस्था को ही निर्वाण कहा जाता है। इसमें मनुष्य के सभी अकुशल धर्म एवं अकुशल मूलों के प्रहाण का अंत हो जाता है। यही दुःख निरोध सत्य है।

(4)- चतुर्थ आर्यसत्य (दुःखनिरोधगामिनी प्रतिपदा):→ इसे अष्टांग-मार्ग भी कहते हैं। 'दुःख-निरोध मार्ग' अर्थात् निर्वाण प्राप्ति का मार्ग। जिन कारणों से दुःख उत्पन्न होता है, उन कारणों के नाश का उपाय ही 'निर्वाण-मार्ग' कहा जाता है। इसे ही बुद्ध ने 'मध्यममार्ग' भी कहा है, क्योंकि यह दो अन्तों का परित्याग कर मध्य (बीच) का अनुसरण करता है। वे दो अन्त हैं—
(i) - कामोपभोग जीवन, (ii) आत्मपीड़नयुक्त जीवन। तथागत ने इसे आँख खोल देने वाला, ज्ञान कराने वाला, शक्ति दाता तथा निर्वाण का अधिगम कराने वाला मार्ग बतलाया है। इस मार्ग में आठ (8) अंगों का समावेश है। ये 8 अंग हैं—

(1) सम्यक् दृष्टि → प्रज्ञा
(2) सम्यक् संकल्प → प्रज्ञा
(3) सम्यक् वाचा → शील
(4) सम्यक् कर्मान्त → शील
(5) सम्यक् आजीविका → शील
(6) सम्यक् व्यायाम → समाधि
(7) सम्यक् स्मृति → समाधि
(8) सम्यक् समाधि → समाधि

—×—